28. यह निष्कर्ष निकालना समान रूप से उतना ही गलत है कि क्योंकि कर्मचारी कहीं अन्यत्र चले गए थे अत: अभिदाय करने का कोई दायित्व नहीं है। यह ध्यानपूर्वक स्मरण करना चाहिए कि अभिदाय का दायित्व स्थापन के प्रारंभ की तारीख से ही उद्भूत हो गया था और यह दायित्व (स्थापन के) बंद होने तक बना हुआ है। यदि ऐसा अर्थान्वयन किया जाता है तो धारा 26 के अधीन सभी कर्मचारियों की प्रसुविधा के लिए सामान्य विधि स्थापित करने का वह उद्देश्य पुन: निरर्थक हो जाएगा।

29. हम उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष को भी स्वीकार नहीं कर सकते कि (चूंकि) प्रदर्श पी०-3 नोटिस (सूचना) 23-6-1988 को, प्रत्यर्थी स्थापन के 31-3-1988 के बंद होने के पश्चात् जारी की गई थी अत: अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी के विरुद्ध की गई कार्रवाई न्यायोचित नहीं मानी जा सकती। यह कार्यवाही अभिदाय की शोध्य रकम की वसूली के संबंध में है जोकि 31-3-1988 को उस समय बंद होने के पूर्व उद्भूत हुई थी। अत: यह इतना महत्वपूर्ण नहीं है कि अभिदाय का संदाय करने की मांग करने संबंधी सूचना कब जारी की गई थी। हमारे सुविचारित मतानुसार ऐसी सूचना नियोजक के लिए उसे अपनी कानूनी बाध्यता को पूरा करने का मात्र एक स्मरण पत्र है।

30. इन सब कारणों से, हमें उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय को जिसके द्वारा कर्मचारी राज्य बीमा न्यायालय के आदेश को मान्य ठहराया है, अपास्त करने में कोई हिचकिचाहट नहीं है। अपीलार्थी विधि अनुसार वसूली संबंधी कार्यवाहियां चलाने का हकदार होगा।

31. तदनुसार, यह अपील खर्चे सहित मंजूर की जाती है।

अपील मंजूर की गई।

ज०/ला०

[1993]4 उम० नि० प० 399

राजस्थान आवासन बोर्ड और अन्य

बनाम

श्री किशन और अन्य

27 जनवरी, 1993

न्या० कुलदीप सिंह और बी० पी० जीवन रेड्डी

राजस्थान भूमि अर्जन अधिनियम, 1953 धारा 17(1)(4) और 17क–भूमिका का अर्जन–धारा 5-अ के अधीन जांच से अभिमुक्ति प्रदान करने वाली अधिसूचना–अर्जित किए जाने के लिए प्रस्थापित भूमि के एक छोटे भाग पर पक्के और कच्चे मकानों का सन्निर्माण अधिसूचना विधिमान्य नहीं। यहां वहां कुछ उपरि–संरचनाओं का अस्तित्व, जहां भूमि का बड़ा भाग अर्जित किया जा रहा है, सरकार को धारा 17s(4) के अधीन शक्ति का प्रयोग करने से निवारित नहीं करता है। इस बात को कि क्या प्रश्नगत भूमि बंजर भूमि है या कृष्य भूमि, भूमि के साधारण स्वरूप और दशा को देखकर तय किया जाना है।

राजस्थान भूमि अर्जन अधिनियम, 1953, धारा 17(4)–के अधीन समाधान आत्मपरक समाधान है और जब तक ऐसी सामग्री मौजूद है जिसके आधार पर सरकार ऋजुतापूर्वक उक्त समाधान कर सकती थी, न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करेगा और न वह अपील प्राधिकारी/प्राधिकरण के रूप में सामग्री पर विचार ही करेगा।

भूमि अर्जन अधिनियम, 1894, धारा 48–भूमि का अर्जन–अस्थायी विनिश्चय–अंतिम विनिश्चय की सूचना नहीं। सरकार भूमि का पहले कब्जा ले चुकी थी। जब एक बार भूमि का कब्जा ले लिया जाता है, तब सरकार के लिए अर्जन वापस लेने का अधिकार नहीं रह जाता है। तारीख 24 फरवरी, 1990 के पत्र में, जिसका याची विद्वान् काउंसेल द्वारा अवलंब लिया गया है, यह वर्णित किया गया है कि "सोसायटी को कब्जा बहाल कराने से पूर्व, विकास प्रभारों की रकम वापस की जानी होगी.....।" स्पष्टत: इससे यह दर्शित होता है कि आवासन बोर्ड द्वारा कब्जा लिया गया था।

ये अपीलें राजस्थान उच्च न्यायालय के पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई हैं, जिसके द्वारा 16 विशेष अपीलों का समूह मंजूर किया गया था। विशेष अपीलें विद्वान् एकल न्यायाधीश के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई थीं, जिसके द्वारा 24 रिट याचिकाओं का समूह खारिज कर दिया गया था। पूर्ण न्यायापीठ के निर्णय का परिणाम यह है कि राजस्थान भूमि अर्जन अधिनियम, 1953 की धारा 4(i) के अधीन राजस्थान सरकार द्वारा जारी की गई अधिसूचना, जिसके द्वारा बड़े परिमाण में भूमि अर्जित करने की प्रस्थापना की गई थी, अभिखण्डित कर दी गई है। अपीलें मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित–जहां तक मुख्य प्रश्न का, जिस पर पूर्ण न्यायपीठ द्वारा विचार किया गया, संबंध है, प्रथमत: ताथ्यिक निष्कर्ष के प्रति निर्देश करना आवश्यक है। यद्यपि रिट याचियों ने यह दलील दी कि आवासिक प्रयोजनों के लिए उपयोग में लाए जाने वाले पक्के मकान, खाम मकान और झोंपड़ियां थीं और पशु शैड, पशु-ताल तथा अन्य संरचनाएं भी थीं, तथापि न्यायालय के समक्ष कोई स्पष्ट सामग्री नहीं रखी गई, जिसका परिणाम यह हुआ कि पूर्ण न्यायपीठ इस आधार पर कार्यवाही करने के लिए अग्रसर हुआ कि ये संरचनाएं अर्जित किए जाने के लिए ईप्सित भूमि के केवल एक भाग पर ही स्थित थीं। (पैरा 6)

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या ऐसी स्थिति में पूर्ण न्यायपीठ के न्यायाधीशों के बहुमत की राय द्वारा यह अभिनिर्धारित करना सही था कि धारा 17 (4) के अधीन अधिसूचनाएं अविधिमान्य घोषित की जानी चाहिए। उत्तर प्रदेश राज्य **बनाम** श्रीमती पिस्ता देवी वाले मामले में लिए गए निर्णय के पैराग्राफ 7 में प्रतिपादित सिद्धांत सही है और उक्त सिद्धांत वस्तुत: उत्तर प्रदेश राज्य संशोधन द्वारा जोड़ी गई धारा 17 की उपधारा (1-अ) पर आधारित नहीं है। यह निश्चित राय व्यक्त करने के पश्चात् कि यहां वहां कुछ उपरि-संरचनाओं का अस्तित्व, जहां भूमि का बड़ा भाग अर्जित किया जा रहा है, सरकार को धारा 17 (4) के अधीन शक्ति का प्रयोग करने से निवारित नहीं करता है। विद्वान् न्यायाधीश ने निम्नलिखित कसौटी प्रतिपादित की- "इस बात को कि क्या प्रश्नगत भूमि बंजर भूमि है या कृष्य भूमि, भूमि के साधारण स्वरूप और दशा को देखकर तय किया जाना है।" इस प्रकार अभिनिर्धारित करके, विद्वान् न्यायाधीशों ने अतिरिक्त समर्थनकारी आधार द्वारा उत्तर प्रदेश राज्य संशोधन के प्रति निदेश किया। न्यायालय की यह राय है कि उक्त राज्य संशोधन के अतिरिक्त भी, उक्त विनिश्चय में प्रतिपादित सिद्धांत सही है और इस मामले में पूर्णत: लागू होता है। अत: यह दलील सही है कि उक्त विनिश्चय द्वारा इन अपीलों में अंतर्वलित उक्त विवाद्यक का निपटारा हो गया है। (पैरा 7 और 9)

विद्वान् न्यायाधीशों ने यह बताया कि अधिसूचना में न तो यह उल्लेख किया गया है कि भूमि बंजर या कृष्य भूमि है और न उसमें यह उल्लेख ही है कि सरकार की राय में धारा 17 के उपबंधों का

अवलंब लेने की आत्ययिकता थी। उक्त विनिश्चय वस्तुतः इस आधार पर आधारित नहीं है कि अधिसूचना यह वर्णित करने में असफल रही है कि भूमि बंजर या कृष्य भूमि है। समग्र रूप में पढ़ने पर उक्त पैराग्राफ से यह दर्शित होता है कि विद्वान् न्यायाधीश इस तथ्य से अत्यधिक प्रभावित थे कि अधिसूचना में यह नहीं कहा गया है कि सरकार की यह राय है कि यह ऐसा मामला था जिसमें धारा 5-अ के अधीन जांच से धारा 17 (4) के अधीन अभिमुक्ति प्रदान की जानी चाहिए। इसी संदर्भ में उन्होंने यह भी उपदर्शित किया कि अधिसूचना में यह वर्णित नहीं किया गया है कि भूमि बंजर या कृष्य भूमि है। धारा 17 (4) में यह अपेक्षा नहीं की गई है कि स्वयं अधिसूचना में इस तथ्य का उल्लेख होना चाहिए कि संबंधित भूमि बंजर या कृष्य भूमि है। ऐसी स्थिति में प्रत्यर्थी की इस दलील का कोई आधार नहीं है कि स्वयं अधिसूचना में उक्त तथ्य का उल्लेख होना चाहिए और न उक्त विनिश्चय से उनकी दलील का समर्थन होता है। (पैरा 13)

सम्यक् सत्यापन करने पर सरकार ने यह पाया कि भूमि की अत्यधिक कमी थी और कमजोर वर्गों तथा मध्य आय वर्ग के लोगों के लिए मकानों के सन्निर्माण के लिए भारी दबाव था; यह कि आवासन बोर्ड ने तारीख 31 मार्च, 1983 तक सन्निर्माण करने और उक्त रकम का उपयोग करने के समयबद्ध कार्यक्रम के अधीन 16 करोड़ रुपये का ऋण अभिप्राप्त किया था; यह कि इन परिस्थितियों में सरकार का यह समाधान हो गया था कि जब तक तुरंत कब्जा नहीं ले लिया जाता और आवासन बोर्ड को सन्निर्माण के बारे में आगे कार्यवाही करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जाता, बोर्ड समयबद्ध कार्यक्रम का पालन करने में समर्थ नहीं होगा। उक्त तथ्य के अतिरिक्त, खण्ड न्यायपीठ ने कतिपय अन्य सामग्री के प्रति भी निर्देश किया, जिसके आधार पर सरकार ने अपना उक्त समाधान किया था, अर्थात् यह कि धन उधार देने वाली संस्था, हुडको द्वारा नियत समयबद्ध कार्यक्रम को देखते हुए, बोर्ड ने उक्त कार्य करने के लिए बड़ी संख्या में इंजीनियरों और अन्य अधीनस्थ स्टाफ की पहले ही नियुक्ति कर दी थी और यह कि धारा 5-अ के अधीन जांच करने के परिणामस्वरूप आवासन बोर्ड की संपूर्ण स्कीम और समय-अनुसूची को खतरे में डालते हुए, आनावश्यक विलंब होता। यहां यह बात अवश्य ध्यान में रखी जानी चाहिए कि धारा 17 (4) के अधीन समाधान आत्मपरक समाधान है और जब तक ऐसी सामग्री मौजूद है, जिसके आधार पर सरकार ऋजुतापूर्वक उक्त समाधान कर सकती थी, न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करेगा और न वह अपील प्राधिकारी/प्राधिकरण के रूप में सामग्री पर विचार ही करेगा। (पैरा 14)

यह स्पष्ट है कि उक्त भूमियों को अनधिसूचित करने के लिए किसी भी समय कोई अंतिम विनिश्चय नहीं किया गया था। निस्संदेह, फरवरी, 1990 में एक अस्थायी विनिश्चय किया गया था किन्तु उसके कार्यान्वित किए जाने से पूर्व ही सरकार ने आवासन बोर्ड का मत अभिनिश्चित करना और यह पता करना आवश्यक समझा कि बोर्ड ने भूमि पर क्या किया था, उसने क्या-क्या संरचनाएं कर ली थीं और उसने कितनी रकम खर्च की थी, जिसने कि बोर्ड की, आवासन व सोसायटी को कब्जा वापस परिदत्त करते समय, क्षतिपूर्ति की जा सकेगी। इससे पूर्व कि ऐसा किया जा सकता, सरकार में परिवर्तन हुआ और उक्त अस्थायी विनिश्चय उलट दिया गया। मामले को इस दृष्टि से देखते हुए, इस प्रश्न पर विचार करना आवश्यक नहीं है कि याची को सरकार के 'विनिश्चय' की संसूचना हुई थी या नहीं। संसूचना अंतिम विनिश्चय की होनी चाहिए, न कि अनन्तिम या अस्थायी विनिश्चय की। (पैरा 25)

किसी भी दशा में, सरकार अधिनियम की धारा 48 के अधीन अर्जन वापस नहीं ले सकती थी, क्योंकि सरकार ने भूमि का कब्जा ले लिया था। जब एक बार भूमि का कब्जा वापस ले लिया जाता है, तब सरकार के लिए अर्जन वापस लेने का अधिकार नहीं रह जाता है। तारीख 24 फरवरी, 1990 के पत्र में भी, जिसका याची विद्वान् काउंसेल द्वारा अवलंब लिया गया है, यह वर्णित किया गया है कि "सोसायटी

को कब्जा बहाल कराने के पूर्व, विकास प्रभारों की रकम वापस की जानी होगी.....।" स्पष्टत: इससे यह दर्शित होता है कि आवासन बोर्ड द्वारा कब्जा लिया गया था। वस्तुत: पत्र के शब्दों से यह प्रकट होता है कि आवासन बोर्ड से यह पूछा गया था कि भूमि पर उन्होंने क्या-क्या विकास कार्य किया था और उस पर कितना व्यय उपगत किया था, जो कार्य तब तक नहीं किया जा सकता था, जब तक कि बोर्ड का भूमि पर कब्जा न हो। आवासन बोर्ड से व्यय की पूर्ण विशिष्टियां प्रेषित करने और उस भूमि पर आगे कोई विकास कार्य न करने के लिए कहा गया। पत्र को समग्र रूप में पढ़ने पर यही कहा जा सकता है कि सरकार द्वारा भूमि का कब्जा ले लिया गया था और वह आवासन बोर्ड को परिदत्त भी किया गया था। चूंकि उनका कब्जा ले लिया गया था, अत: भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 48 के अधीन अर्जन वापस लेने का कोई प्रश्न उद्भूत नहीं हो सकता था।

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[1987]	[1987]2 एम० नि० प० 349 = [1986]4एस० सी० सी० 251 : **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **श्रीमती पिस्ता देवी;**	5

प्रभेदित निर्णय

[1980]	[1980]3 उम० नि० प० 11 = (1979)4 एस० सी० सी० 485 : **डोरा फालोली बनाम पंजाब राज्य और अन्य;**	5
[1965]	ए० आई० आर० 1965 एस० सी० 1763 : **सरजू प्रसाद साह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य।**	5

सिविल अपीली अधिकारिता : 1986 की सिविल अपील सं० 1418, जिसके साथ अन्य मामले भी सुने गए।

1982 की खण्ड न्यायपीठ विशेष अपील सं० 301 में राजस्थान उच्च न्यायालय के तारीख 6 जनवरी, 1986 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील।

अपीलार्थी की ओर से	सर्वश्री सोली जे० सोराबजी, एस० पी० सिंह, सूर्यकांत और बी० डी० शर्मा
रिट याचिका सं० 209/89 में याचियों की ओर से	सर्वश्री डी० डी० ठाकुर, एम० एल० लाहोटी, सुश्री शिप्रा खजांची, के० सी० गेहानी और प्रेम सुन्दर झा।
राजस्थान राज्य की ओर से	सर्वश्री एफ० एस० नरीमन, एस० पी० सिंह, सूर्यकांत और अरुणेश्वर गुप्त
प्रत्यर्थियों की ओर से	सर्वश्री पी० एन० मिश्र, सुशील कुमार जैन और सुश्री प्रतिभा जैन

न्यायालय का निर्णय न्या० बी० पी० जीवन रेड्डी ने दिया।

न्या० रेड्डी–ये अपीलें राजस्थान उच्च न्यायालय के पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई हैं, जिसके द्वारा 16 विशेष अपीलों का समूह मंजूर किया गया था। विशेष अपीलें विद्वान् एकल न्यायाधीशों के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई थीं, जिसके द्वारा 24 रिट याचिकाओं का समूह खारिज कर दिया गया था। पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय का परिणाम यह है कि राजस्थान भूमि अर्जन के अधिनियम, 1953 की धारा 4 (1) के अधीन राजस्थान सरकार द्वारा जारी की गई अधिसूचना, जिसके द्वारा बड़े परिमाण में भूमि अर्जित करने की प्रस्थापना की गई थी, अभिखण्डित कर दी गई है।

2. तारीख 13 जनवरी, 1982 के राजस्थान राजपत्र में प्रकाशित, राजस्थान अधिनियम की धारा 4 (1) के अधीन अधिसूचना द्वारा 2,517 बीघा (लगभग 1,580 एकड़ के बराबर) भूमि को राजस्थान आवासन बोर्ड के फायदे के लिए अर्जित करने की प्रस्थापना की गई। तारीख 9 जनवरी, फरवरी, 1982 को, उक्त अधिनियम की धारा 17 (4) के अधीन एक अन्य अधिसूचना जारी की गई, जिसके द्वारा धारा 5 (अ) के उपबंधों से अभिमुक्ति प्रदान की गई। सरकार के अनुसार, तारीख 22 और 14 मई, 1982 को भूमि का कब्जा भी ले लिया गया। रिट याचिकाओं (1992 की एकल न्यायपीठ सिविल रिट सं० 707 आदि) के समूह में उक्त अधिसूचनाओं की विधिमान्यता को तीन आधारों पर चुनौती दी गई, अर्थात् (i) अर्जित भूमि (बंजर) या कृष्य भूमि नहीं थी, क्योंकि उक्त भूमि पर पक्के और कच्चे मकान, झोंपड़ियां और पशु शैड आदि थे। यदि ऐसी स्थिति थी, तो धारा 17 की उपधारा (1) और उपधारा (4) के अधीन शक्ति का, धारा 5 (अ) के अधीन जांच से अभिमुक्ति प्रदान करने के लिए अवलंब नहीं लिया जा सकता था ; (ii) कोई वास्तविक आत्ययिकता नहीं थी; जिससे कि आत्ययिकता खण्ड का अवलंब लेना आवश्यक होता। धारा 5 (अ) के अधीन जांच की जानी चाहिए थी, जो ऐसे भूस्वामियों को प्रदत्त मूल्यवान् अधिकार है, जिनकी भूमि अधिनियम के अधीन अर्जित की जाती है; और (iii) किसी भी दशा में, अर्जित भूमियों पर निर्मित मकान और अन्य संरचनाओं को अर्जित नहीं किया जाना चाहिए था।

3. विद्वान् न्यायाधीश ने उक्त तीनों दलीलें अस्वीकार कर दीं और रिट याचिकाएं खारिज कर दीं। उसके विरुद्ध विशेष अपीलें फाइल की गईं, जिनकी प्रथमत: खण्ड न्यायपीठ द्वारा सुनवाई की गई। दोनों विद्वान् न्यायाधीशों, न्या० एन० एम० कासलीवाल और के० एस० सिद्धू ने परस्पर मतभेद व्यक्त किया। तदनुसार, तारीख 12 दिसम्बर, 1983 के आदेश द्वारा मामला एक तृतीय न्यायाधीश को निर्देशित किया गया। तृतीय न्यायाधीश के विचारार्थ तीन प्रश्न विरचित किए गए, अर्थात् (i) क्या सरकार के लिए अधिसूचना में यह उल्लेख करना आवश्यक था कि भूमि बंजर या कृष्य भूमि है और क्या उक्त तथ्य का उल्लेख न किए जाने से अधिसूचना दूषित हो गई है; (2) क्या सरकार के लिए धारा 17 (4) के अधीन जारी की गई अधिसूचना में यह उल्लेख करना बाध्यकर था कि अर्जित किए जाने के लिए प्रस्थापित भूमि या कृष्य भूमि है तथा क्या उसका उल्लेख न करने से उक्त अधिसूचना दूषित हो गई है; और (3) यदि अर्जित किए जाने के लिए प्रस्थापित कृष्य भूमि का एक छोटा सा भाग आवासिक प्रयोजनों के लिए और चारा रखने, पशु फार्मों, पशु शैडों के लिए और ऐसे ही अन्य प्रयोजनों के लिए झोंपड़ियों, खाम मकानों और पक्के मकानों जैसे भवनों द्वारा अधिभोग में लिया जाता है तो क्या उस स्थिति में भी संपूर्ण भूमि को कृष्य भूमि मानना अनुज्ञेय है और राजस्थान भूमि अर्जन अधिनियम, 1953 की धारा 17 (1)के साथ पठित, धारा 17 (4) के अधीन अधिसूचना जारी करना अनुज्ञेय है। यदि नहीं, तो वे विधिक परिणाम क्या हैं, जो उक्त अधिसूचना के संदर्भ में ऐसे पूर्वोक्त भवनों से अंतर्वलित होंगे।"

4. तृतीय न्यायाधीश ने उक्त प्रश्नों पर अपनी राय अभिलिखित की किन्तु जब मामला वापस खण्ड न्यायपीठ के समक्ष गया, तब उसकी राय यह थी कि प्रश्न सं० 1 और 2 पर विद्वान् न्यायाधीश की राय स्पष्ट थी, जिसके द्वारा विद्वान् एकल न्यायाधीश के मत की पुष्टि की गई थी, जब कि प्रश्न सं० 3 पर उनकी राय स्पष्ट नहीं थी। तदनुसार उक्त प्रश्न सं० 3 पूर्ण न्यायपीठ को निर्देशित किया गया। पूर्ण न्यायपीठ ने, जिसमें न्या० एन० एम० कासलीवाल, न्या० एम० बी० शर्मा और न्या० फारुक हसन थे, पक्षकारों को सुना और बहुमत (न्या० शर्मा और न्या० फारुक हसन) द्वारा यह अभिनिर्धारित किया कि (चूंकि) अर्जित किए जाने के लिए प्रस्थापित भूमि के एक भाग पर पक्के और कच्चे मकान और पशु शैड आदि थे और चूंकि अधिसूचना वियोज्य नहीं है, अत: धारा 17 (4) के अधीन संपूर्ण अधिसूचना अविधिमान्य है। तदनुसार, धारा 6 के अधीन घोषणा भी अभिखण्डित कर दी गई। अल्पमत की राय न्या० कासलीवाल द्वारा व्यक्त की गई। उन्होंने यह राय व्यक्त की कि केवल इस कारण की अर्जित किए जाने के लिए प्रस्थापित भूमि के एक छोटे भाग पर पक्के और कच्चे मकान थे अधिनियम की धारा 17 (1) के साथ पठित धारा 17 (4) के अधीन शक्ति का अवलंब अविधिमान्य नहीं था। हमारे समक्ष वाली इन अपीलों में न्यायाधीशों के बहुमत की राय को ही चुनौती दी गई है।

5. अपीलार्थी (राजस्थान राज्य) के विद्वान् काउंसेल, श्री सोली जे० सोराबजी ने यह निवेदन किया कि उच्च न्यायालय में पूर्ण न्यायपीठ द्वारा विचार किए गए प्रश्न का **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **श्रीमती पिस्ता देवी**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय द्वारा निपटारा कर दिया गया है और इसलिए अपीलें सीधे मंजूर की जानी चाहिएं। दूसरी ओर, प्रत्यर्थियों-रिट याचियों के विद्वान् काउंसेल, श्री डी० डी० ठाकुर और श्री एस० एल० जैन ने **सूरज प्रसाद साह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले में किए गए विनिश्चय के आधार पर यह निवेदन किया कि जब एक बार यह निष्कर्ष निकाल दिया जाता है कि अर्जित किए जाने के लिए प्रस्थापित भूमि का भाग बंजर या कृष्य भूमि नहीं है, तब संपूर्ण अधिसूचना अविधिमान्य घोषित कर दी जानी चाहिए, क्योंकि अधिसूचना वियोज्य (अलग किए जाने योग्य) नहीं है। उन्होंने यह निवेदन भी किया कि **डोरा फालोली** बनाम **पंजाब राज्य और अन्य**[3] वाले मामले में किए गए विनिश्चय से उनकी इस दलील का समर्थन होता है कि स्वयं धारा 17 (1) के साथ पठित, धारा 17 (4) के अधीन अधिसूचना में अभिव्यक्त रूप से यह वर्णित होना चाहिए कि वह भूमि, जिसकी बाबत उक्त शक्ति का अवलंब लिया जा रहा है, बंजर या कृष्य भूमि है और उक्त तथ्य का उल्लेख न किए जाने से अधिसूचना दूषित हो गई है। विद्वान् काउंसेल ने यह तर्क देने का भी प्रयास किया कि ऐसी कोई आत्ययिकता नहीं थी, जिससे कि धारा 5 (अ) के अधीन जांच से अभिमुक्ति अपेक्षित हो। उन्होंने यह निवेदन किया कि जब चार ग्रामों को समाविष्ट करने वाली भूमि का बड़ा भाग अर्जित किया जा रहा था, तो यह उचित और न्यायसंगत ही था कि धारा 5 (अ) के अधीन जांच की जाती। यह निवेदन किया गया कि आवासन बोर्ड द्वारा मकानों का निर्माण इतना आवश्यक नहीं था कि थोड़ा सा विलंब भी सहन नहीं किया जा सकता था और इसलिए आत्ययिकता का अवलंब अपेक्षित नहीं था।

6. जहां तक मुख्य प्रश्न का, जिस पर पूर्ण न्यायपीठ द्वारा विचार किया गया, संबंध है, प्रथमत: तात्थिक निष्कर्ष के प्रति निर्देश करना आवश्यक है। यद्यपि रिट याचियों ने यह दलील दी कि आवासिक प्रयोजनों के लिए उपयोग में लाये जाने वाले पक्के मकान, खाम मकान और झोंपड़ियां थीं और पशु शैड,

---

1 [1987]2 उम० नि० प० 349 = (1986)4 एस० सी० सी० 251

2 [1980]3 उम० नि० प० 11 = ए० आई० आर० 1965 एस० सी० 1763.

3 [1979]4 एस० सी० सी० 485.

पशु ताल तथा अन्य संरचनाएं भी थीं, तथापि न्यायालय के समक्ष कोई स्पष्ट सामग्री नहीं रखी गई, जिसका परिणाम यह हुआ कि पूर्ण न्यायपीठ इस आधार पर कार्यवाही करने के लिए अग्रसर हुआ कि ये संरचनाएं अर्जित किए जाने के लिए ईप्सित भूमि के केवल एक भाग पर ही स्थित थीं। हम न्या० शर्मा के निर्णय (बहुमत की राय) से निम्नलिखित मताभिव्यक्ति उद्धृत करना उचित समझते हैं–

> "पक्षकारों के अभिवचनों से इस बात के बारे में बिल्कुल भी विवाद नहीं उठाया जा सकता कि अपीलार्थियों में से कुछ अपीलार्थियों के मामले में, इस भूमि के भाग पर कच्चे मकान, खाम मकान और कुछ पक्के सन्निर्माण भी स्थित हैं, जिनका उपयोग अपीलार्थियों द्वारा अपने पशुओं को बांधने, चारे और अनाज के संग्रहण के लिए तथा आवासिक प्रयोजनों के लिए भी किया जा रहा है। यह नहीं कहा जा सकता है कि 2570.15 बीघा के बड़े क्षेत्र में से किस भाग पर ये सन्निर्माण किए गए हैं, किन्तु अपीलार्थियों के मामले में, प्रत्येक मामले में, वे अर्जित किए जाने के लिए ईप्सित संपूर्ण भूमि के एक भाग पर ही हो सकते थे।"
>
> (बल देने के लिए रेखांकन हमारे द्वारा किया गया है)

7. अब प्रश्न यह है कि क्या ऐसी स्थिति में पूर्ण न्यायपीठ के न्यायाधीशों के बहुमत की राय द्वारा यह अभिनिर्धारित करना सही था कि धारा 17 (4) के अधीन अधिसूचना अविधिमान्य घोषित की जानी चाहिए।

8. ऊपर निर्दिष्ट उत्तर प्रदेश राज्य बनाम श्रीमती पिस्ता देवी वाले मामले में न्या० ई० एस० वेंकटरामैया और खालिद वाले न्यायपीठ ने ऐसे ही प्रश्न पर विचार किया। उक्त मामला उत्तर प्रदेश से उद्भूत हुआ, जहां संशोधन द्वारा धारा 17 में उपधारा 1 (अ) जोड़ी गई। उक्त निर्णय के पैरा 7 में उक्त राज्य संशोधन को उद्धृत करने के अतिरिक्त, निर्णय का विनिश्चयाधार दिया गया है, जो इस प्रकार है–

> "उसके पश्चात् यह दलील दी गई कि अर्जित भूमि के बड़े परिमाण में, जो लगभग 412 एकड़ था, यहां-वहां कुछ भवन थे, और इसलिए भूमि के उन भागो का जिन पर भवन स्थित थे अर्जन अन्यायोचित था, क्योंकि वे बंजर या कृष्य भूमि नहीं थे, जिन पर अधिनियम की धारा 17 (1) के अधीन चर्चा की जा सकती थी। उच्च न्यायालय ने इस दलील पर विचार नहीं किया है। तथापि, हम उसमें कोई तत्व नहीं पाते हैं। सरकार ऐसी कोई संपत्ति अर्जित नहीं कर रही थी, जो सारभूत रूप से भवनों के अंतर्गत आती थी। उसने मेरठ नगर के बाहरी भागों में लगभग 412 एकड़ भूमि अर्जित की, जिसे कलक्टर द्वारा कृष्य भूमि के रूप में वर्णित किया गया था। यह सत्य हो सकता है कि यहां वहां कुछ उपरिसंरचनाएं थीं। इस प्रकार के मामले में, जहां भूमि का बड़ा भाग नगरीय क्षेत्र के योजनाबद्ध विकास के लिए अर्जित किया जाना है, विकास स्कीम से छोटे भाग को छोड़ना उचित नहीं होगा, जिन पर कुछ उपरि संरचनाएं सन्निर्मित की गई हैं। ऐसी स्थिति में, जहां वास्तविक आत्ययिकता है, भूमि के कुछ टुकड़ों के मामले में अधिनियम की धारा 5 (अ) लागू करना जिन पर कुछ संरचनाएं स्थित हैं, और शेष संपत्ति को उसके लागू किए जाने से छूट देना कठिन होगा। इस प्रश्न को कि क्या प्रश्नगत भूमि बंजर या कृष्य भूमि है, भूमि की साधारण प्रकृति और दशा देखकर निर्धारित किया जाना है। इस मामले में अर्जित किए जाने के लिए प्रस्थापित भूमि के ऐसे भाग को, जिस पर उपरि-संरचनाएं स्थित थीं, विशेष उपबंध के कारण, जिसे भूमि अर्जन (उत्तर प्रदेश संशोधन अधिनियम) 1954 का अधिनियम सं० 22 द्वारा अधिनियम की धारा 17 की उपधारा (1-अ) के रूप में अंत: स्थापित किया गया है, अधिनियम की धारा 17 (1) की उपयोज्यता की आगे किसी वैधता या औचित्य

पर विचार करना आवश्यक नहीं है, (उपधारा) इस प्रकार है–

*"(1-अ) उपधारा (1) के अधीन कब्जा लेने की शक्ति का बंजर या कृष्य भूमि के भिन्न से भिन्न भूमि के मामले में भी प्रयोग किया जा सकता है, जहां भूमि किसी प्रकार के स्वच्छता संबंधी सुधार या योजनाबद्ध विकास के लिए या के संबंध में अर्जित की जाती है।"

9. हमारी राय है कि उक्त पैराग्राफ में प्रतिपादित सिद्धांत सही है और उक्त सिद्धांत वस्तुत: उत्तर प्रदेश राज्य संशोधन द्वारा जोड़ी गई धारा 17 की उपधारा (1-अ) पर आधारित नहीं है। यह निश्चित राय व्यक्त करने के पश्चात् कि यहां-वहां कुछ उपरि-संरचनाओं का अस्तित्व, जहां भूमि का बड़ा भाग अर्जित किया जा रहा है, सरकार को धारा 17 (4) के अधीन शक्ति का प्रयोग करने से निवारित नहीं करता है, विद्वान् न्यायाधीश ने निम्नलिखित कसौटी प्रतिपादित की–"इस बात को कि क्या प्रश्नगत भूमि बंजर भूमि है या कृष्य भूमि, भूमि के साधारण स्वरूप और दशा को देखकर तय किया जाना है।" इस प्रकार अभिनिर्धारित करके, विद्वान् न्यायाधीशों ने अतिरिक्त समर्थनकारी आधार द्वारा उत्तर प्रदेश राज्य संशोधन के प्रति निर्देश किया। हमारी यह राय है कि उक्त राज्य संशोधन के अतिरिक्त भी, उक्त विनिश्चय में प्रतिपादित सिद्धांत सही है और इस मामले में पूर्णत: लागू होता है। अत: श्री सोराबजी का यह दलील देना सही है कि उक्त विनिश्चय द्वारा इन अपीलों में अंतर्वलित उक्त विधायक का निपटारा हो गया है।

10. तथापि, प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने ऊपर निर्दिष्ट सूरज प्रसाद साह **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य वाले मामले में किए गए विनिश्चय के आधार पर यह निवेदन किया कि ऐसी स्थिति में चूंकि अधिसूचना वियोज्य (अलग किए जाने योग्य) नहीं है, अत: संपूर्ण अधिसूचना अविधिमान्य घोषित की जानी चाहिए। हम इससे सहमत नहीं हो सकते हैं। वह इस अर्थ में विपरीत मामला था कि अर्जित किए जाने के लिए प्रस्थापित भूमि का बड़ा भाग भवनों और सन्निर्माणों के अंतर्गत आता था, जबकि केवल एक छोटा भाग बंजर ही या कृष्य भूमि था। ऐसी स्थिति में ही न्यायालय ने यह राय व्यक्त की कि अधिसूचना आंशिक रूप से मान्य और आंशिक रूप से अविधिमान्य नहीं मानी जा सकती। तदनुसार, धारा 17 (4) के आत्ययिकता खण्ड का अवलंब लेकर धारा 5 (अ) के अधीन जांच से अभिमुक्ति देना अविधिमान्य था। अब पैरा (9) को, जिसका विद्वान् काउंसेल द्वारा अवलंब लिया गया है, उपवर्णित करना उचित होगा। उक्त पैरा इस प्रकार है–

"न्यायालय में उठाए गए एक अन्य बिन्दु (मुद्दे) के प्रति संक्षेप में निर्देश करना उचित होगा। नगरपालिका बोर्ड, बस्ती की ओर से हाजिर होते हुए, श्री एस० पी० सिन्हा ने यह दलील दी कि अर्जन हेतु अधिसूचित भूमि का एक भाग बंजर या कृष्य भूमि था और अपनी इस दलील के समर्थन में विद्वान् काउंसेल ने हमारे समक्ष कतिपय राजस्व अभिलेख के प्रति निर्देश किया। किन्तु, यदि भूमि का एक केवल एक भाग ही बंजर या कृष्य है और शेष भाग बंजर या कृष्य नहीं है, तो धारा 5-अ की अध्यपेक्षाओं के अनुपालन से अभिमुक्ति प्रदान करने वाली धारा 17 (4) के अधीन अधिसूचना अविधिमान्य होगी। न्यायालय के लिए अधिसूचना को आंशिक रूप

---

*अंग्रेज़ी में इस प्रकार है–

"(1–A) The power to take possession under sub-section (1) may also be exercised in the case of land other than waste or arable land, where the land is acquired for or in connection with sanitary improvements of anykind or planned development."

से मान्य और आंशिक रूप से अविधिमान्य समझने की छूट नहीं होगी, क्योंकि यदि राज्य को धारा 4 (1) के अधीन अधिसूचित भूमि के किसी भाग की बाबत जांच से अभिमुक्ति देने की कोई शक्ति नहीं थी, तो प्रस्थापित अर्जन की बाबत आक्षेप उठाने के लिए अधिसूचित भूमि के हितबद्ध व्यक्तियों को अवसर देते हुए, धारा 5-अ के अधीन जांच अवश्य ही की जानी चाहिए और उक्त जांच में हितबद्ध व्यक्तियों को बंजर या कृष्य भूमि से भिन्न रूप की बाबत आक्षेप उठाने तक ही निर्बन्धित नहीं किया जा सकता।"

11. हम नहीं समझते कि ऐसे मामले में, जिनमें अर्जित किए जाने के लिए ईप्सित भूमि के बड़े परिमाण का केवल एक भाग ही बंजर या कृष्य नहीं है, उक्त निर्णय में की गई मताभिव्यक्तियां लागू होती हैं।

12. उसके पश्चात् प्रत्यर्थियों के विद्वान काउंसेल ने ऊपर निर्दिष्ट डोरा फालोली **बनाम** पंजाब राज्य और अन्य वाले मामले का अपनी इस दलील के समर्थन में अवलंब लिया कि धारा 17 (4) के अधीन अधिसूचना में अनिवार्यत: यह वर्णित होना चाहिए कि संबंधित भूमि बंजर या कृष्य भूमि है और ऐसे वर्णन के अभाव से अधिसूचना अविधिमान्य हो जाती है। न्या० एन० एल० ऊंटवालिया और ए० पी० सेन के निर्णय में अवलंबित मताभिव्यक्तियां इस प्रकार हैं–

"यह बात स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए कि उपधारा (4) के अधीन, समुचित सरकार यह निर्देश कर सकेगी कि धारा 5-अ के उपबंध लागू नहीं होंगे, जहां राज्य की राय में, उपधारा (1) या उपधारा (2) के उपबंध लागू होते हैं, अन्यथा नहीं। उपधारा (1) के उपबंध लागू करने के लिए, दो बातों को अवश्य ही पूरा किया जाना चाहिए, प्रथमत: यह कि वह भूमि, जिसकी बाबत आत्ययिकता उपबंध लागू किया जा रहा है, बंजर या कृष्य भूमि है, और दूसरे, तुरंत कब्जा लेने के मामले में कार्यवाही करने की आत्ययिकता है और इसलिए धारा 5-अ के अधीन आक्षेप फाइल करने के लिए भूमि के स्वामी का अधिकार उसे उपलब्ध नहीं बनाया जाना चाहिए। अधिसूचना के भाग में, जिसे हमने ऊपर उद्धृत किया है, न तो यह उल्लेख किया गया है कि भूमि बंजर या कृष्य भूमि है और न ही यह वर्णित किया गया है कि सरकार की राय में अधिनियम की धारा 17 के उपबंधों का अवलंब लेने की कोई आत्ययिकता थी। आत्ययिकता के आधार पर धारा 17 के अधीन कार्यवाही करने के लिए कलक्टर को निदेश दिया गया है किन्तु यह विधि की अध्यपेक्षा की विधिक और पूर्ण पूर्ति नहीं है। यहां यह बात याद रखी जानी है कि अधिनियम की धारा 5-अ के अधीन आक्षेप फाइल करने के लिए संपत्ति में कोई हित रखने वाले व्यक्ति के अधिकार में ऐसी आकस्मिक (लापरवाहीपूर्ण) या मनमानी रीति में हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए, जैसाकि इस मामले में किया गया है।"

13. विद्वान् न्यायाधीशों ने यह बताया कि अधिसूचना में न तो यह उल्लेख किया गया है कि भूमि बंजर या कृष्य भूमि है और न ही उसमें यह उल्लेख है कि सरकार की राय में धारा 17 के उपबंधों का अवलंब लेने की आत्ययिकता थी। उक्त विनिश्चय वस्तुत: इस आधार पर आधारित नहीं है कि अधिसूचना यह वर्णित करने में असफल रही है कि भूमि बंजर या कृष्य भूमि है। समग्र रूप में पढ़ने पर उक्त पैराग्राफ से यह दर्शित होता है कि विद्वान् न्यायाधीश इस तथ्य से अत्यधिक प्रभावित थे कि अधिसूचना में यह नहीं कहा गया है कि सरकार की यह राय है कि यह ऐसा मामला था, जिसमें धारा 5-अ के अधीन जांच से

धारा 17 (4) के अधीन अभिमुक्ति प्रदान की जानी चाहिए। इसी संदर्भ में उन्होंने यह भी उपदर्शित किया कि अधिसूचना में यह वर्णित नहीं किया गया है कि भूमि बंजर या कृष्य भूमि है। धारा 17 (4) में यह अपेक्षा नहीं की गई है कि स्वयं अधिसूचना में इस तथ्य का उल्लेख होना चाहिए कि संबंधित भूमि बंजर या कृष्य भूमि है। ऐसी स्थिति में प्रत्यर्थी की इस दलील का कोई आधार नहीं है कि स्वयं अधिसूचना में उक्त तथ्य का उल्लेख होना चाहिए और न उक्त विनिश्चय से उनकी दलील का समर्थन ही होता है।

14. श्री ठाकुर ने यह तर्क भी दिया कि आवासन बोर्ड द्वारा मकानों के सन्निर्माण का कार्य इतना आत्ययिक नहीं है, जिससे कि उक्त शक्ति का अवलंब लेना अपेक्षित हो। हम इससे संतुष्ट नहीं हैं। प्रथमत: इस प्रश्न पर राज्य उच्च न्यायालय का विनिश्चय रिट याचियों के विरुद्ध है। विद्वान् एकल न्यायपीठ ने उसे अस्वीकार कर दिया तथा तृतीय न्यायाधीश की राय का अनुसरण करते हुए, खण्ड न्यायपीठ ने भी उसे अस्वीकार कर दिया। दूसरे, हमारा यह समाधान हो गया है कि इस मामले में सरकार के समक्ष ऐसी सामग्री थी, जिसके आधार पर वह यह अपेक्षित राय बना सकती थी और उसने यह राय बनाई भी कि यह ऐसा मामला था, जिसमें धारा 17 (4) के अधीन शक्ति का प्रयोग अपेक्षित था। विद्वान् एकल न्यायाधीश ने उस सामग्री के प्रति निर्देश किया है, जिसके आधार पर सरकार ने उक्त राय बनाई थी। न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत सामग्री से यह प्रकट होता था कि सम्यक् सत्यापन करने पर सरकार ने यह पाया कि भूमि की अत्यधिक कमी थी और कमजोर वर्गों तथा मध्य आय वर्ग के लोगों के लिए मकानों के सन्निर्माण के लिए भारी दबाव था; यह कि आवासन बोर्ड ने तारीख 31 मार्च, 1983 तक सन्निर्माण करने और उक्त रकम का उपयोग करने के समयबद्ध कार्यक्रम के अधीन 16 करोड़ रुपये का ऋण अभिप्राप्त किया था; यह कि इन परिस्थितियों में सरकार का यह समाधान हो गया था कि जब तक तुरंत कब्जा नहीं ले लिया जाता और आवासन बोर्ड को सन्निर्माण के बारे में आगे कार्यवाही करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जाता, बोर्ड समयबद्ध कार्यक्रम का पालन करने में समर्थ नहीं होगा। उक्त तथ्य के अतिरिक्त, खण्ड न्यायपीठ ने कतिपय अन्य सामग्री के प्रति भी निर्देश किया, जिसके आधार पर सरकार ने अपना उक्त समाधान किया था, अर्थात् यह कि धन उधार देने वाली संस्था, हुडको द्वारा नियत समयबद्ध कार्यक्रम को देखते हुए, बोर्ड ने उक्त कार्य करने के लिए बड़ी संख्या में इंजीनियरों और अन्य अधीनस्थ स्टाफ की पहले ही नियुक्ति कर दी थी और यह कि धारा 5-अ के अधीन जांच करने के परिणामस्वरूप आवासन बोर्ड की संपूर्ण स्कीम और समय-अनुसूची को खतरे में डालते हुए, अनावश्यक विलम्ब होता। यहां यह बात अवश्य ही ध्यान में रखी जानी चाहिए कि धारा 17(4) के अधीन समाधान आत्मपरक समाधान है और जब तक ऐसी सामग्री मौजूद है, जिसके आधार पर सरकार ऋजुतापूर्वक उक्त समाधान कर सकती थी, न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करेगा और न वह अपील प्राधिकारी/प्राधिकरण के रूप में सामग्री पर विचार ही करेगा न केवल धारा 17(4) के अधीन बल्कि साधारणत: भी आत्मपरक समाधान की बाबत इस न्यायालय के विनिश्चयों द्वारा इसी सिद्धांत की अभिपुष्टि की गई है।

15. उपर्युक्त कारणों से अपीलें मंजूर की जाती हैं और यहां आक्षेपित, राजस्थान उच्च न्यायालय के पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय को अपास्त किया जाता है। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, हम पक्षकारों को अपना-अपना खर्च स्वयं वहन करने का निदेश करते हैं।

1989 की रिट याचिका (सिविल) सं० 290.

16. यह रिट याचिका न्यू पिंक गृह निर्माण सहकारी संघ द्वारा फाइल की गई है, जिसमें उन्हीं अधिसूचनाओं को प्रश्नगत किया गया है, जिन्हें राजस्थान उच्च न्यायालय में फाइल की गई रिट याचिकाओं में प्रश्नगत किया गया था और जिनसे पूर्वोक्त सिविल अपीलें उद्भूत हुई हैं। इसे उपर्युक्त अपीलों के लम्बित रहने के कारण विचारार्थ ग्रहण किया गया और उनके साथ ही इसे भी सुने जाने का निदेश किया गया। रिट याचिका में अनेक अनुतोषों की मांग की गई, अर्थात् धारा 4(1) के अधीन अधिसूचना का अभिखण्डित

किया जाना, धारा 17(4) के अधीन अधिसूचना का अभिखण्डित किया जाना और धारा 6 के अधीन घोषणा। यह प्रार्थना की गई है कि अर्जन कार्यवाहियों के बारे में यह घोषित किया जाना चाहिए कि वे राजस्थान के माननीय आवासन मंत्री के तारीख 20 जुलाई, 1984 के आदेश के आधार पर वापस ले ली गई हैं।

17. तथापि, हमारे समक्ष याची के विद्वान् काउंसेल, श्री डी० डी० ठाकुर ने केवल एक दलील पर बल दिया, अर्थात् यह कि राजस्थान सरकार के नगरीय विकास के भारसाधक मंत्री और मुख्यमंत्री के तारीख 8 फरवरी, 1990 के विनिश्चय के आधार पर राजस्थान सरकार के बारे में यह माना जाना चाहिए कि उसने भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 48 के अर्थान्तर्गत उक्त अर्जन कार्यवाहियां वापस ले ली हैं, जहां तक याची-सोसाइटी द्वारा खरीदी गई भूमियों का संबंध है। इस दलील को ठीक-ठीक समझने के लिए सुसंगत तथ्यों और परिस्थितियों की क्रमश: अवेक्षा करना आवश्यक है।

18. धारा 4(1) के अधीन अधिसूचना तारीख 12 जनवरी, 1982 को प्रकाशित की गई। तारीख 9 फरवरी, 1982 को, धारा 17(4) के अधीन अधिसूचना और धारा 6 के अधीन घोषणा जारी की गई। सरकार के अनुसार, तारीख 22 और 24 मई, 1982 को संपूर्ण भूमि का कब्जा भी ले लिया गया।

19. याची-सहकारी सोसाइटी ने, जिसने खातेदारों से लगभग 525 बीघा भूमि खरीदने का दावा किया है, सरकार को उनके द्वारा खरीदी गई भूमि को अनधिसूचित करने के लिए अभ्यावेदन किया। उक्त अभ्यावेदन के आधार पर, नगर विकास के तत्कालीन भारसाधक मंत्री ने तारीख 20 जुलाई, 1984 को भूमियों को निर्मोचित करने का विनिश्चय किया किन्तु तत्कालीन मुख्यमंत्री, श्री हरदेव जोशी ने तारीख 29 अप्रैल, 1985 को उनके विनिश्चय को उलट दिया। मुख्यमंत्री का विनिश्चय भी हमारे समक्ष रखा गया है। यह विवाद्यक 1990 तक यों ही पड़ा रहा। तारीख 27 जनवरी, 1990 को साधारण निर्वाचनों की घोषणा की गई। मतदान तारीख 27 फरवरी, 1990 को होना था। इसी प्रक्रम पर ऐसा प्रतीत होता है कि इस मामले में आकस्मिक आत्ययिकता पुन: उद्भूत हुई। याची-सोसाइटी ने नगर विकास मंत्री को तारीख 6 फरवरी, 1990 को उनके द्वारा खरीदी गई भूमियों को अनधिसूचित करने के लिए अभ्यावेदन किया। नगर विकास मंत्री ने भूमियों के अनधिसूचित किए जाने की सिफारिश की, जिसका मुख्यमंत्री श्री हरदेव जोशी द्वारा तारीख 8 फरवरी, 1990 को अनुमोदन किया गया। उसे तारीख 13 फरवरी, 1990 को संबंधित मंत्री द्वारा हस्ताक्षरित किया गया।

20. मुख्यमंत्री के विचारार्थ नगर विकास मंत्री द्वारा प्रस्तुत सिफारिश में निम्नलिखित तथ्य वर्णित किए गए थे—याची-सोसाइटी ने इंदिरा विहार आवासिक स्कीम विकसित करने के लिए सारभूत परिमाण में भूमि खरीदने के लिए 1974-75 और 1975-76 में विक्रय करार किए थे और वर्ष 1976 से 1981 के दौरान अपने 3 हजार सदस्यों को भू-खण्ड भी आबंटित किए थे। सोसायटी ने वर्ष 1981 में नगर सुधार न्यास के पास नियमों के अनुसार उप-खण्ड प्रभारों के रूप में 50,000 रुपये की रकम जमा कराई थी और उसी वर्ष स्कीम के तकनीकी अनुमोदन के लिए कार्यवाहियां आरंभ की थीं। सोसाइटी ने भूमि संपरिवर्तन नियमावली, 1981 के अधीन मार्च, 1982 में अपर कलक्टर, भूमि संपरिवर्तन के कार्यालय में भूमि के संपरिवर्तन के लिए कृषि-भूमि से नगरीय भूमि के रूप में 9 लाख रुपये की राशि जमा कराई थी। आवासन बोर्ड ने वस्तुत: अर्जन हेतु कार्यवाहियां आरंभ कर दी थीं और जनवरी, 1982 में, अर्थात् सोसाइटी द्वारा उपर्युक्त कदम उठाए जाने के पश्चात्, अर्जन अधिसूचनाएं जारी की गईं। याची-सोसाइटी ने अर्जन कार्यवाहियों के विरुद्ध रोक आदेश अभिप्राप्त कर लिया था और वर्ष 1990 में, उच्चतम न्यायालय द्वारा मंजूर रोक आदेश प्रवृत्त था। तारीख 18 जनवरी, 1990 को राज्य सरकार ने विहित रकम के संदाय पर आवासन सहकारी सोसाइटियों की स्कीम के अंतर्गत आने वाली अर्जनाधीन भूमियों को नियमित करने और अनर्जित

करने के लिए नीति-संबंध विनिश्चय किया। उक्त नीति-याची सोसाइटी को लागू की जा सकती है। जहां तक नगर भूमि की अधिकतम सीमा से छूट का संबंध है, अन्य सोसाइटियों के समान ही, इस सोसाइटी के सभी भू-खण्ड धारक अपने भूखण्ड जयपुर भूमि प्राधिकरण को सौंप देंगे और वह सरकारी भूमि मानी जाएगी किन्तु विहित निबंधनों पर नियत कीमत और विकास प्रभार प्रभारित करने के पश्चात् उन्हीं भूधारकों को पुन: आबंटित कर दी जाएगी। अन्य मामलों में भी जयपुर विकास प्राधिकरण द्वारा इसी प्रक्रिया का अनुसरण किया जा रहा है। इस प्रकार, नगर भूमि अधिकतम सीमा से छूट की समस्या का भी समाधान हो जाएगा। अंतिम सिफारिश इस प्रकार थी–"पूर्वोक्त तथ्यों को देखते हुए, अधिनियम, 1894 की धारा 48 के उपबंधों के अधीन स्कीम की भूमि को अनर्जित करने और स्कीम को नियमित करने के लिए निदेश देना वांछनीय होगा क्योंकि यह सोसाइटी कार्यवाहियां आरंभ करके आवासन के उसी लोक प्रयोजन को पूरा कर रही है, जिसके लिए आवासन बोर्ड इस प्रयोजन के लिए बाद में इस भूमि को अर्जित करना चाहता है।"

21. जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है, मुख्यमंत्री ने तारीख 8 फरवरी, 1990 को उपर्युक्त सिफारिश स्वीकार कर ली। ऐसा प्रतीत होता है कि तारीख 23 फरवरी, 1990 को मामला पुन: माननीय मुख्यमंत्री के समक्ष आया, जब उन्होंने एक टिप्पण का अनुमोदन दिया, जिसका उत्तरार्द्ध इस प्रकार है–"अत: यह बात व्यापक लोक हित में होगी कि सोसाइटी की भूमि, उसे अर्जन से निर्मोचित करने के पश्चात्, मंत्रिमण्डल के विनिश्चय के अनुसार नियमित कर दी जाए जैसी कि स्थानीय स्वशासन के भारसाधक मंत्री और आवासन मंत्री की राय है। जहां तक अनुसूचित जातियों/जनजातियों की भूमि का संबंध है, इस बाबत सरकार काफी पहले ही विनिश्चय कर चुकी है, जिसके अनुसार कार्यवाहियां की जानी हैं।" स्पष्टत:, पूर्वोक्त विनिश्चय के अनुसरण में, राजस्थान सरकार के नगर विकास और आवासन विभाग, जयपुर के उप सचिव ने राजस्थान आवासन बोर्ड, जयपुर के सचिव को निम्नलिखित पत्र प्रेषित किया–

"राजस्थान सरकार

नगर विकास और आवासन विभाग

सं० एफ० 5 (3) यूडीएच०/92 तारीख 24-4-1990

सचिव,

राजस्थान आवासन बोर्ड,

जयपुर।

विषय : देवरी, सुखालपुरा, झालना चौर और गोलियाबास ग्रामों में स्थित इंदिरा विहार स्कीम सहकारी समिति की भूमि के अर्जन के विषय में।

महोदय,

उपर्युक्त विषय की बाबत राज्य सरकार द्वारा यह निदेश किया गया है कि सोसाइटी की पूर्वोक्त भूमि को अर्जन से निर्मोचित करने का विनिश्चय किया गया है। यह बात राज्य सरकार की जारकारी में लाई गई है कि इस स्कीम के अंतर्गत आने वाली भूमि पर आपके द्वारा कुछ सुधार कार्य किया गया है। अत: कृपया यह संसूचित करें कि आपने सोसाइटी की पूर्वोक्त स्कीम के अंतर्गत आने वाली भूमि पर कौन-कौन से विकास कार्य किए हैं और आवासन बार्ड द्वारा उस पर कितना व्यय उपगत किया गया है। कृपया तुरंत राज्य सरकार को पूर्ण विशिष्टियां भेजें और अविलंब यह भी सूचित करें कि न्यायालयों में मामला किस प्रक्रम पर चल रहा है। जहां तक संभव हो, इस भूमि पर आगे कोई विकास कार्य न करें। कृपया इस

संबंध में संसूचित करें कि भूमि का कब्जा ले लिया गया है या नहीं। सोसाइटी को कब्जा पुन: दिलाने से पूर्व, विकास प्रभारों की रकम वापस की जानी होगी, अत: 3 दिन के भीतर मूल्यांकन भेजें। संपरिवर्तन प्रभार नियमों के अनुसार संदेय होंगे। न्यायालय के आदेशों की प्रतियां भी भेजी जाएं।

भवदीय

ह० उप सचिव"

22. उक्त पत्र की एक प्रति याची-सोसाइटी को भी प्रेषित की गई, जैसाकि उक्त पत्र के नीचे किए गए पृष्ठांकन से स्पष्ट होता है, जो इस प्रकार है–

"सं० एफ० 5 (3) यूडीबी/90 तारीख 29-2-90

सूचनार्थ एक प्रति सचिव, न्यू पिंक सिटी गृह निर्माण सहकारी समिति, लि० बापू बाजार, जयपुर को प्रेषित। कृपया वह संसूचित करें कि विकास प्रभारों और भूमि के खर्च आदि की रकम कितने समय के अंदर जमा कराई जाएगी।

ह०

उप सचिव, राजस्थान सरकार

28-2-90"

23. रिट याचियों के विद्वान् काउंसेल यहां रुक जाते हैं और यह कहते हैं कि उपर्युक्त कार्यवाहियां भूमियों को अनधिसूचित और अनर्जित करने का निश्चित और अंतिम विनिश्चय गठित करती हैं और धारा 48 के अर्थान्तर्गत अर्जन का प्रत्याहरण (अर्जन को वापस लेने का कार्य) गठित करने के लिए और कुछ किए जाने की आवश्यकता नहीं थी।

24. तथापि, राजस्थान सरकार की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान काउंसेल, श्री एफ० एस० नरीमन ने तारीख 24 फरवरी, 1990 के पूर्वोक्त पत्र के पश्चात् होने वाली घटनाओं को उपवर्णित करते हुए एक अतिरिक्त शपथपत्र फाइल किया, जिसकी अब अवेक्षा करना उचित होगा। अतिरिक्त शपथपत्र राजस्थान आवासन बोर्ड के सचिव, श्री० एम० के० खन्ना द्वारा सशपथ फाइल किया गया है। यह कहा गया है कि तारीख 24 फरवरी, 1990 के पूर्वोक्त पत्र के उत्तर में राजस्थान आवासन बोर्ड ने सरकार को अभ्यावेदन किया कि भूमि अनधिसूचित नहीं की जानी चाहिए, जिन पर नगर विकास और आवासन सचिव ने तारीख 25 मई, 1990 को याची-सोसाइटी की भूमि के अनर्जन के लिए अधिसूचना जारी किए जाने के कार्य को रोके जाने का आदेश किया (इसी बीच, एक नई सरकार, जिसका प्रतिनिधित्व एक भिन्न राजनीतिक दल द्वारा किया गया, अस्तित्व में आ गई थी)। सचिव का तारीख 25 मई, 1990 का आदेश अतिरिक्त शपथपत्र के उपाबंध X-1 के रूप में फाइल किया गया है। यह निवेदन भी किया गया है कि अर्जन वापस लेते हुए, किसी भी समय कोई अधिसूचना जारी नहीं की गई। यह भी कहा गया है कि तारीख 13 दिसम्बर, 1990 को तत्कालीन मुख्यमंत्री ने याची की भूमि के अनर्जन से संबधित संपूर्ण मामला रिपोर्ट हेतु बेरी आयोग को निर्देशित किया। उक्त आयोग पूर्वतर सरकार के कृत्यकारियों और पदाधिकारियों द्वारा की गई अवैधताओं और अनियमितताओं की जांच करने के लिए गठित किया गया। बेरी आयोग ने यह प्रतिवेदन दिया कि याची-सोसाइटी की भूमियों को अनर्जित करने का विनिश्चय मंत्रिमण्डल के पूर्वतर विनिश्चय के

उल्लंघन में था और वह विधि तथा लोक हित के विरुद्ध था। आयोग ने यह कहा कि उक्त विनिश्चय याची सोसाइटी द्वारा संबंधी मंत्री पर डाले गए प्रभाव का परिणाम था और वह ऋजु विनिश्चय नहीं है। मुख्य मंत्री ने भी याची-सोसाइटी के प्रभाव और दबाव के अधीन कार्य किया और इसलिए उनका विनिश्चय भी समुचित विनिश्चय नहीं है। उक्त प्रतिवेदन स्वीकार करते हुए, सरकार ने राजस्थान आवासन बोर्ड को संसूचित किया कि उक्त भूमि को अनर्जित करने का कोई प्रश्न ही नहीं है। तारीख 24 अप्रैल, 1990 का पत्र भी तारीख 31 अक्टूबर, 1991 को प्ररुपिकत: वापस ले लिया गया । उक्त अतिरिक्त शपथपत्र में यह भी कहा गया है कि खातेदारों ने, जिनसे सोसाइटी ने विक्रय के करारों के अधीन उक्त भूमि खरीदने का दावा किया है, पृथक पत्रों द्वारा राजस्थान आवासन बोर्ड के सचिव और भूमि अर्जन कलक्टर को काफी पहले तारीख 5 अप्रैल, 1982 को ही संसूचित कर दिया है कि उन्हें उनकी भूमियों के अर्जन की बाबत कोई आक्षेप नहीं है। उन्होंने प्रति बीघा 40,000 रुपये की दर से प्रतिकर की मांग की है।

25. उपर्युक्त सामग्री से यह स्पष्ट होता है कि उक्त भूमियों को अनधिसूचित करने के लिए किसी भी समय कोई अंतिम विनिश्चय नहीं किया गया था। निस्संदेह फरवरी, 1990 में एक अस्थायी विनिश्चय किया गया था किन्तु उसके कार्यान्वित किए जाने से पूर्व ही सरकार ने आवासन बोर्ड का मत अभिनिश्चित करना और यह पता करना आवश्यक समझा कि बोर्ड ने भूमि पर क्या किया था, उसने क्या-क्या संरचनाएं करें ली थीं और उसने कितनी रकम खर्च की थी, जिससे कि बोर्ड की, आवासन सोसाइटी को कब्जा वापस परिदत्त करते समय, क्षतिपूर्ति की जा सके। इससे पूर्व कि ऐसा किया जा सकता, सरकार में परिवर्तन हुआ और उक्त अस्थायी विनिश्चय उलट दिया गया। मामले को इस पुष्टि से देखते हुए, हमारे लिए इस प्रश्न पर विचार करना आवश्यक नहीं है कि याची को सरकार के विनिश्चय की संसूचना हुई थी या नहीं। संसूचना अंतिम विनिश्चय की होनी चाहिए, न कि अनन्तिम या अस्थायी विनिश्चय की।

26. हमारी यह भी राय है कि किसी भी दशा में, सरकार अधिनियम की धारा 48 के अधीन अर्जन वापस नहीं ले सकती थी, क्योंकि सरकार ने भूमि का कब्जा ले लिया था। जब एक बार भूमि का कब्जा ले लिया जाता है, तब सरकार के लिए अर्जन वापस लेने का अधिकार नहीं रह जाता है, तारीख 24 फरवरी, 1990 के पत्र में भी जिसका याची विद्वान् काउंसेल द्वारा अवलंब लिया गया है, यह वर्णित किया गया है कि "सोसाइटी को कब्जा बहाल कराने से पूर्व, विकास प्रभारों की रकम वापस की जानी होगी.....।" स्पष्टत: इससे यह दर्शित होता है कि आवासन बोर्ड द्वारा कब्जा लिया गया था। वस्तुत: पत्र के शब्दों से यह प्रकट होता है कि आवासन बोर्ड से यह पूछा गया था कि भूमि पर उन्होंने क्या-क्या विकास कार्य किया था और उस पर कितना व्यय उपगत किया था, जो कार्य तब तक नहीं किया जा सकता था, जब तक कि बोर्ड का भूमि पर कब्जा न हो। आवासन बोर्ड से व्यय की पूर्ण विशिष्टियां प्रेषित करने और उस भूमि पर आगे कोई विकास कार्य न करने के लिए कहा गया। पत्र को समग्र रूप में पढ़ने पर यही कहा जा सकता है कि सरकार द्वारा भूमि का कब्जा ले लिया गया था और वह आवासन बोर्ड को परिदत्त भी किया गया था। चूंकि उनका कब्जा ले लिया गया था, अत: भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 48 के अधीन अर्जन वापस लेने का कोई प्रश्न उद्भूत नहीं हो सकता था।

27. उपर्युक्त कारणों से रिट याचिका असफल रहती है और खर्चे सहित खारिज की जाती है।

रिट याचिका खारिज की गई।

न०